जैन साहित्य सम्वर्द्धनमें राष्ट्रकूटयुगका योगदान

डॉ० ज्योतिप्रसाद जैन, लखनऊ

देश कालकी राजनीतिक परिस्थिति पर तत्तद् सांस्कृतिक एवं साहित्यिक प्रगति एक बहुत बड़ी सीमा तक निर्भर करती है। यदि किसी पर्याप्त विस्तृत भूखण्ड पर किसी एक शक्तिशाली राज्यसत्ताका सुव्यवस्थित शासन लगभग एक सौ वर्ष पर्यन्त भी निरन्तर चलता रहता है, तो उसकी जनता सुख, शान्ति और समृद्धिका प्रभूत उपभोग करती है। ऐसी स्थितिमें धार्मिक भावनाओं, सांस्कृतिक प्रवृत्तियों और साहित्यिक एवं कलाके सृजनको भी विशेष प्रेरणा मिलती है। यदि शासनवर्ग नीतिपरायण, प्रबुद्ध, विद्यारसिक और कलाप्रेमी भी हुआ, तो सोनेमें सुगन्धकी उक्ति चरितार्थ होती है। सामान्यतया जन साधारण भी राजन्यवर्ग तथा नेताओंका ही अनुसरण करते हैं। अब यदि शासकवर्ग किसी एक धर्म, परम्परा या सम्प्रदायका ही विशेष अथवा एकान्त पक्षपाती हुआ, तब उसी परम्परासे सम्बन्धित साहित्यिक एवं कलाका विशेष उत्कर्ष होता है। किन्तु वह उदार, सहिष्णु एवं सर्व-धर्म-समभावी हुआ, तो राज्यमें प्रचलित प्रायः सभी सांस्कृतिक परम्परायें अपनी-अपनी प्राणवत्ता एवं क्षमताओंके अनुरूप फलती-फूलती हैं और विभिन्न परम्पराओंके अनुयायियोंमें परस्पर आदान-प्रदान, सहयोग और सद्भाव भी बना रहता है। विवक्षित राष्ट्रके सर्वतोमुखी उत्कर्षकी यह सुखद भूमिका होती है।

यही कारण है कि गुप्तकाल ब्राह्मण संस्कृत साहित्य एवं कलाका स्वर्णयुग कहलाया, बंगाल-बिहारके पालयुगने बौद्ध संस्कृतिका उत्कर्ष देखा, गुजरातके सोलंकियों (चौलुक्यों) के शासनकालमें श्वेताम्बर परम्पराके जैन साहित्यका सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वाधिक भाग रचा गया, विद्याप्रेमी परमारोंके मालवामें विपुल जैन तथा ब्राह्मणीय साहित्यका सृजन हुआ और दक्षिणापथके राष्ट्रकूटयुगमें दिगम्बर-परम्पराके विविध विषयक जैन साहित्यके सर्वश्रेष्ठ बहुसंख्यक ग्रन्थोंका प्रणयन हुआ। आगे, मध्यकालमें भी विजयनगर और मुगल साम्राज्योंके स्वर्णयुग उनकी कला और साहित्यके भी स्वर्णयुग रहे हैं। विश्वके प्रायः देशके इतिहासमें यही तथ्य दृष्टिगोचर होता है।

यह एक सुखद संयोग रहा कि दक्षिणापथके जिस भूभागको केन्द्र बनाकर आठवीं शती ई० में राष्ट्रकूटोंका अभ्युदय हुआ, वहीं दूसरीसे पांचवीं शती पर्यन्त वनवासी (वैजयन्ती)के कटुम्ब नरेशोंकी सत्ता बनी रही और उसके प्रारम्भकालमें ही कदम्बनरेश शिवकोटिके परमगुरु स्वामिसमन्तभद्र (ल० १२०–१८५ ई०)[1] जैसे दिग्गज दार्शनिक साहित्यकार एवं महान् प्रभावक दिगम्बराचार्य हुए थे। यों, उसके पूर्व भी, प्रथम शताब्दी ई० में ही भगवान् कुन्दकुन्द, पुष्पदन्त, भूतबलि प्रभृति कई शीर्षस्थानीय आचार्यपुंगव अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व द्वारा सम्पूर्ण दक्षिण भारतको भली-भाँति अनुप्राणित कर चुके थे।[2] कदम्बोंके समसामयिक उदयमें आने वाले गंगवाडिके शक्तिशाली जिनधर्मी गंगरायकी सर्वोत्तम देन गंगनरेश दुर्विनीतके गुरु आचार्य पूज्यपाद देवनन्दि (४६४-५२४ ई०) थे।[3] इसी प्रकार उक्त कदम्बोंके उत्तराधिकारी, वातापीके

१. ज्योतिप्रसाद जैन, जैनसोर्सेज आफ दि हिस्ट्री आफ एन्शन्ट इण्डिया, पृ० १४३-१४९।

२. वही, पृ० १०७-१२८।

३. वही, पृ० १५३-१६२।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पश्चिमी चालुक्य (५वीं—८वीं शती ई०) साम्राज्यकी अद्वितीय देन पूज्यपाद भट्टाकलङ्कदेव (ल० ६४०–७२० ई०) थे।[1] इस बीच दक्षिण देशमें अन्य भी कई छोटे-बड़े जैन साहित्यकार हुए।

७२०–२५ ई० के लगभग राष्ट्रकूटोंकी लट्टलूर शाखाके इन्द्र द्वितीयके पुत्र दन्तिदुर्ग खण्डावलोक वैरमेवने जो एक चालुक्य राजकुमारीसे उत्पन्न था, एलडर (एलोरा) प्रदेशमें अपने पैर जमाये, ७३३ में स्वयं को स्वतन्त्र राजा घोषित किया, ७४२ ई० में एलडरको विधिवत् राजधानी बना लिया और ७५२ ई० में अन्तिम चालुक्य नरेश कीर्तिवर्मनको पूर्णतया पराजित करके वह महाराजाधिराज बन गया।[2] उसके उत्तराधिकारी कृष्ण प्रथम शुभतुंग (७५७–७३ ई०) ने राज्यकी सीमाओं और शक्तिका और अधिक विस्तार किया। उसने गंगनरेश श्रीपुरुष मुत्तरस 'शत्रुभयंकर' के गुरु विमलचन्द्राचार्यके प्रशिष्य महान् तार्किक परवादिमल्लको अपनी राजसभामें सम्मानित किया था। एलोराके विश्वप्रसिद्ध कलापूर्ण शैव एवं जैन गुहामन्दिरोंका उत्खनन भी इसी नरेशके समयमें प्रारम्भ हुआ। उसका ज्येष्ठ पुत्र गोविन्द द्वि० (७७३–७९ ई०) अयोग्य था किन्तु कनिष्ठ पुत्र ध्रुव धारावर्ष निरुपम वल्लभराय धवलश्य (७७९–९३ ई०) बड़ा पराक्रमी, विजेता एवं विद्वानोंका प्रश्रयदाता था। वस्तुतः राष्ट्रकूटोंने अपने पूर्ववर्ती, कदम्बों और चालुक्यों की ही सर्वधर्मसमभावी उदार नीतिका अनुसरण किया, फलस्वरूप उनके प्रश्रयमें अनेक जैनाचार्योंने भारती के भण्डारको अमूल्य ग्रन्थरत्नोंसे अलंकृत किया।

पञ्चस्तूपान्वयी चन्द्रसेनाचार्यके प्रशिष्य और आर्यनन्दिगुरुके शिष्य, लक्षाधिक श्लोक परिमाण शास्त्रके रचयिता, सर्वमहान् आगमिक टीकाकार स्वामी वीरसेन (७५०–७९० ई०) ने अपनी जन्मभूमि चित्रकूटपुर (चित्तौड़) से विद्यागुरु एलाचार्यके सान्निध्यमें सिद्धान्तोंका गहन अध्ययन करनेके उपरान्त, राष्ट्रकूट नरेश दन्तिदुर्गके शासन कालमें ही उसके राज्यके केन्द्रसे नातिदूर, नासिक देशके वाटग्रामपुरमें अपना केन्द्र स्थापित कर लिया था, जहाँ वह निर्द्वन्द्व होकर साहित्य-साधनामें जुट गये। इस ज्ञानपीठमें उन्होंने एक विशाल ग्रन्थागार बना लिया, अनेक विद्वान शिष्योंका समुदाय प्राप्त कर लिया और उसे एक विश्वविद्यालयका रूप दे दिया जो लगभग डेढ़ सौ वर्ष तक फलता-फूलता रहा। स्वामी वीरसेनके शिष्योंमें प्रमुख थे—दशरथगुरु, विनयसेन, पद्मसेन, कुमारसेन, देवसेन और जिनसेन स्वामी और समकालीन दक्षिणात्य जैन साहित्यकारों एवं प्रभावक आचार्योंमें विमलचन्द्र, प्रभाचन्द्र, बृहद्नन्दवीर्य, परवादिमल्ल, अनन्तकीर्ति, बुद्धकुमारसेन, स्वामी विद्यानन्द, जिनसेन सूरि (पुन्नाट्संघी), अपभ्रंश महाकवि स्वयंभू आदि प्रसिद्ध हैं।

ध्रुव धारावर्षके प्रतापी पुत्र एवं उत्तराधिकारी गोविन्द तृतीय जगत्तुंग प्रभूतवर्ष (७९३–८१४ ई०) के समयमें साम्राज्यके विस्तार वैभव एवं शक्तिमें और अधिक वृद्धि हुई तथा राजधानीके रूपमे मनोरम मान्यखेट महानगरीका निर्माण हुआ। उसके समयमें स्वामि वीरसेनके पट्टशिष्य स्वामि जिनसेन व उनके सधर्माओंने तथा श्रीपाल मुनि, एलकाचार्य, वर्द्धमानगुरु, विजयकीर्ति, अर्ककीर्ति, कवि त्रिभुवन स्वयम्भू (स्वयम्भूके पुत्र) आदि सन्तोंने साहित्य-साधना और धर्मप्रभावना की।

गोविन्द तृतीयका पुत्र एवं उत्तराधिकारी नृपतुंग-शर्ववर्म-श्रीवल्लभ-महाराजशण्ड-अतिशय-धवल-वीरनारायण-वल्लभराज आदि विरुदधारी सम्राट् अमोघवर्ष प्रथम (८१५–८७६ ई०) तत्कालीन भारतवर्षके

---

१. वही, पृ० १७१-१८०।

२. राष्ट्रकूट इतिहास के लिए देखें—एस० एस० आल्तेकर कृत राष्ट्रकूटाज एण्ड देयर टाइम्स तथा ज्योतिप्रसाद जैन कृत भारतीय इतिहास, एकदृष्टि, द्वितीय सं०, पृ० २९२-३१०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्वाधिक विस्तृत, शक्तिशाली एवं समृद्ध साम्राज्यका एकच्छत्र स्वामी था। देशमें सुख, शान्ति और सुव्यवस्था थी। उसके पूर्वज जैनधर्मके अनुयायी नहीं थे, किन्तु उसके प्रति पूर्णतः सहिष्णु और उसके अच्छे प्रश्रयदाता थे। अमोघवर्ष सुनिश्चित रूपसे जैनधर्मका अनुयायी था, स्वामी जिनसेन उसके विद्यागुरु, धर्मगुरु एवं राजगुरु थे, राज्य परिवारके कई अन्य स्त्री-पुरुष सदस्य तथा वीर वंकेयरस प्रभृति अनेक सामन्त सरदार जिनधर्म भक्त थे। साम्राज्यमें दर्जनों जैन सांस्कृतिक संस्थान एवं ज्ञानकेन्द्र भली प्रकार फल-फूल रहे थे। इसी नरेशके शासन-कालमें स्वामी विद्यानन्दने अपने अन्तिम ग्रन्थ रचे, कवि त्रिभुवन स्वयम्भूने अपने पिता महाकवि स्वयम्भूके महाकाव्योंका संवर्द्धन-सम्पादन किया, कल्याणकारकके रचयिता उग्रादित्याचार्यने सम्राट्की प्रेरणा पर अपने ग्रन्थके परिशिष्टके रूपमें मांस-निषेध प्रकरण या हिताहिताध्याय रचा, महावीराचार्यने गणितसार-संग्रह आदि रचे, शाकटायन पाल्यकीर्तिने शब्दानुशासन एवं उसकी स्वोपज्ञ अमोघवृत्तिका प्रणयन किया, महाकवि असगने महावीरचरित्र आदि कई पौराणिक चरित्र रचे और स्वामी जिनसेनने गुरुकी अधूरी टीका जयधवलको पूर्ण किया, पार्श्वाभ्युदय जैसा अप्रतिम काव्य रचा और महापुराण का प्रारम्भ किया, जिसे उनके शिष्य गुणभद्राचार्यने आदिपुराणके अवशिष्ट भाग तथा उत्तरपुराणकी रचना करके पूर्ण किया। गुणभद्रकी अन्य कई रचनाएँ हैं वह युवराज कृष्ण द्वितीयके विद्यागुरु भी थे। स्वयं सम्राट् श्रेष्ठ विद्वान, विविध भाषाविज्ञ, कवि और लेखक था। कविराजमार्ग और प्रश्नोत्तर रत्न-मलिका उसकी कृतियाँ हैं। अन्य भी साहित्य प्रणयन उस युगमें हुआ तथा त्रैकाल्ययोगी, देवेन्द्र मुनीश्वर, नागविन्द, देवसेन, कुमारसेन आदि अनेक प्रभावक आचार्य हुए। सुप्रसिद्ध विद्वान डॉ० राजकृष्ण गोपाल भण्डारकरके शब्दोंमें "राष्ट्रकूट नरेशोंमें अमोघवर्ष जैनधर्मका सर्वमहान संरक्षक था। यह बात सत्य प्रतीत होती है कि उसने स्वयं जैनधर्म धारण कर लिया था[1]।"

अमोघवर्षके पुत्र एवं उत्तराधिकारी कृष्ण द्वितीय शुभतुंग अकालवर्ष (८७८--९१४ ई०) के गुण-भद्राचार्य तो गुरु ही थे, उनके शिष्य लोकसेन, हुमच्चके मौनी सिद्धान्त भट्टारक, पेरियकुडिके अशिष्ट नेमिभट्टारक, कोप्पणतीर्थके चटगुदुभट्टारक व उनके शिष्य सर्वनन्दि, चन्दिकावाटके वीरसेन एवं कनकसेन मुनि आदि अनेक दिगम्बराचार्य साम्राज्यमें विचरते थे। कन्नड एवं संस्कृतमें साहित्यसृजन भी हुआ। कृष्ण द्वि०के पौत्र एवं उत्तराधिकारी इन्द्र तृ० (९१४--९२२ ई०) ने भी लोक भद्र आदि गुरुओंका सम्मान किया, जिनालय निर्माण कराए, वसदियों आदिको पुष्कल दान दिये। उसके उपरान्त, अमोघवर्ष द्वि० (९२२--२५ ई०), गोविन्द चतुर्थ (९२५--३६ ई०) और अमोघवर्ष तृतीय वद्दिग (९३६--९३९ ई०) क्रमशः राष्ट्रकूट सिंहासन पर बैठे, जो अपेक्षाकृत निर्बल एवं साधारण नरेश थे, किन्तु जैनधर्मके लिए राज्याश्रय पूर्ववत बना रहा।

तदनन्तर, कृष्णराज तृ० अकालवर्ष (९३९--९६७ ई०) राष्ट्रकूट वंशका अन्तिम महान सम्राट था, जो बड़ा प्रतापी एवं उदार भी था और जिसके समयमें भी जिनधर्मने प्रभूत उत्कर्ष प्राप्त किया तथा विपुल जैन साहित्य रचा गया। नन्न और भरत जैसे जैन महामन्त्री, भारसिंह और राजमल्ल जैसे साम्राज्यके स्तम्भ जिनधर्मी गंगनरेश, और केशरी चालुक्य जैसे सामन्त, वीर मार्तण्ड चामुण्डराय जैसे प्रचण्ड जैन सेनानी, महाकवि पुष्पदन्त, पम्प, सोमेदवसूरि, इन्द्रनन्दि, वीरनन्दि, कनकनन्दि, अजित सेनाचार्य, नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती प्रभृति अनेक कवि, साहित्यकार एवं प्रभावक आचार्य उस युगमें दक्षिण भारतमें हुए।

---

१. दि हिस्ट्री आफ डेकन-अमोघवर्ष व उसके सामन्त वीर वंकेय आदि की विस्तृत जानकारीके लिए, देखिए ज्योतिप्रसाद जैन कृत "प्रमुख जैन ऐतिहासिक पुरुष और महिलायें", पृ० १०१-१०६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृष्ण तृ० के पश्चात् राष्ट्रकूट शक्तिका ह्रास द्रुतवेगसे प्रारम्भ हो गया, जिसका निवारण करनेमें उसके उत्तराधिकारी खोट्टिग नित्यवर्ष (९६८-७२ ई०), कर्क द्वि० (९७२-७३ ई०) और इन्द्र चतुर्थ (९७३-८२ ई०) सर्वथा असमर्थ रहे। सन् ९७२ में सीयक परमारने राजधानी मान्यखेटको जी भरकर लूटा और उसके दो वर्षके भीतर ही तेलपदेव चालुक्यने राष्ट्रकूटोंकी सत्ता हस्तगत करके कल्याणीके पश्चिमी चालुक्य साम्राज्यकी नींव रख दी। वीर इन्द्र चतुर्थ ७-८ वर्ष अपने राज्यके लिए भीषण संघर्ष, एवं युद्ध करता रहा। अन्ततः वह संसारसे विरक्त हो गया और ९०२ ई० में उसने सल्लेखनापूर्वक देहत्याग कर दिया। इसके एक वर्ष पूर्व ही ९८१ ई० में श्रवणबेलगोलकी विन्ध्यगिरि पर विश्वविश्रुत गोम्मटेश बाहुबलिकी महाकाय प्रतिमा प्रतिष्ठित हो चुकी थी।

इस प्रकार लगभग अढ़ाई शताब्दी व्यापी राष्ट्रकूट युगमें जैनधर्म दक्षिणापथका सर्वप्रधान धर्म था, साम्राज्यकी लगभग दो तिहाई जनता, कई सम्राट. अनेक राजपुरुष, रानियाँ, राजकुमार, राजकुमारियाँ, अधीनस्थ राजे, सामन्त सरदार, सेठ-महाजन, शिल्पी-कर्मकार, सभी वर्गों एवं वर्णोंमें जिनधर्मकी प्रवृत्ति थी। लोकशिक्षा भी जैन गुरुओं, जैन वसिदयों एवं विद्यापीठोंके माध्यमसे संचालित थी। विभिन्न धर्मोंमें पारस्परिक सद्भावना थी। अपने इस उत्कर्षकालमें जैन संस्कृतिने भारतीय संस्कृतिका सर्वतोमुखी विकास किया, जैन कालाकारोंने मनोरम कलाकृतियोंसे देशको अलंकृत किया और जैन कवियों एवं साहित्यकारोंने भारतीके भण्डारको महर्घ्य ग्रन्थरत्नोंसे भरा।[1]

राष्ट्रकूट नरेशोंकी छत्रछायामें उक्त राष्ट्रकूट युगमें लगभग एक सौ जैन ग्रन्थकारों द्वारा, जो प्रायः सब ही दिगम्बर आम्नायसे सम्बन्धित रहे, लगभग दो सौ ग्रन्थरत्नोंके रचे जानेका पता चलता है। इन रचनाओंमें लगभग ११० संस्कृत, ३५ प्राकृत, २० कन्नड़, १५ अपभ्रंश और ६ तमिल भाषाकी हैं। धवल-जयधवल जैसी अतिविशालकाय आगमिक टीकाओंके अतिरिक्त, सैद्धान्तिक, तात्त्विक, आध्यात्मिक, दार्शनिक नैयायिक, तार्किक, पौराणिक, कथा साहित्य, आचारशास्त्र, भक्तिस्तोत्रादि, मन्त्रशास्त्र इत्यादि जैन धार्मिक साहित्यके द्रव्यानुयोग-करणानुयोग-चरणानुयोग-प्रथमानुयोग, चारों ही अनुयोगोंके प्रायः सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा बहुधा आधारभूत साहित्यका सर्जन हुआ। इसके अतिरिक्त, व्याकरण, कोश, छन्द, अलंकार, गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद, चिकित्साशास्त्र, प्राणिविज्ञान, राजनीति आदि ज्ञान-विज्ञान विषयक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थोंका भी प्रणयन हुआ। इस अद्भुत साहित्यिक उपलब्धिका श्रेय उक्त देशकालकी अनुकूल परिस्थितियोंको ही है।

इसी युगमें अन्यत्र, राष्ट्रकूट साम्राज्यके बाहर, राजस्थान आदिमें भी आचार्य सिद्धसेन (भाष्यकार), हरिभद्रसुरि, सिद्धसेनगणी, उद्योतनसूरि, जयसिंहसूरि, शीलाचार्य, शिलांकदेव, सिद्धर्षि विजयसिंहसूरि, महेश्वरसूरि, शोभक धनपाल जैसे लगभग एक दर्जन श्वेताम्बराचार्योंने भी विपुल एवं महत्त्वपूर्ण साहित्यकी संस्कृत एवं प्राकृतमें रचना की। किन्तु उनके कृतित्वमें राष्ट्रकूटोंका कोई योगदान प्रतीत नहीं होता।

विभिन्न स्रोतोंसे ज्ञात राष्ट्रकूट युगके पूर्वोक्त ग्रन्थकारों तथा उनकी ज्ञात रचनाओंकी एक सूची नीचे सारणीमें दी जा रही है। सूचीगत कई रचनायें ऐसी भी हैं जो अधुना अनुपलब्ध हैं, कुछ-एकके विषयमें अनिश्चय भी हो सकता है। ग्रन्थकारके नामके सामने कोष्टकमें उसका निश्चित या अनुमानित समय ईस्वी सन्में दिया है, रचनाके सामने भाषा (स-संस्कृत, प्रा०-प्राकृत, अप—अपभ्रंश, क—कन्नड़,

१. भारतीय इतिहास, एक दृष्टि, पृ० ३०९-३१०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त—तमिल) का सूचन है, जहाँ सम्भव हुआ, ग्रन्थ परिभाषा (श्लोक संख्या) का संकेत कर दिया गया है। यदि किसी ग्रन्थकी रचनातिथि सुनिश्चित ज्ञात है, तो वह भी विक्रम-सम्वत् (वि० स०) या शकसम्वत् (शक) में दी गई है ल: अक्षर लगभगका सूचक है।

सारणी—राष्ट्रकूटयुगके जैन ग्रन्थकार और उनके ग्रन्थ

बृहद् अनन्तवीर्य (ल०७२५ ई०)—	अकलंकके सर्वप्रथम टीकाकार
	सम्भवतया सिद्धिविनिश्चयकी टीका (सं०)
भवनन्दि ,,	नन्नूल (त० व्याकरण)
वादि सिंह (ल० ७२५-७५० ई०)	आप्तमीमांसालंकार (सं०) प्रमाणनौका (सं०)
अज्ञात ,,	तर्कदीपिका (सं०) वर्द्धमानपुराण (सं०)
वीरसेन स्वामी (ल० ७२५-७९०)	षट्खण्डागम सिद्धान्तकी धवला टीका (प्रा० सं० ७२०००) (वि० स० ८३८-७८१ ई०), कसायपाहुडकी जयधवल टीका (प्रा० सं०, २००००, अपूर्ण), महाधवल (महाबन्ध) (प्रा०, ४००००) (सं०) सिद्धभूपद्धति (सं० गणित विषयक), तिलोयपण्णत्तिका संस्कार (सम्पादन)
प्रभाचन्द्रकवि (ल० ७५० ई०)	चन्द्रोदय काव्य (सं०)
सगुणचन्द्र ,,	अकलंकके ग्रन्थकी टीका (?)
अनन्तकीर्ति प्र० ,,	प्रामाण्य भंग (सं०)
मारुतदेव ,,	अपभ्रंश काव्य (?)
इन्द्रनन्दि योगी ,,	छेदपिण्ड—प्रायश्चित्तशास्त्र (प्रा०, ३३३)
परवादिमल्ल (ल० ७७०-८००)	धर्मकीर्तिके न्यायविन्दुकी धर्मोत्तरकृत टीकाका टिप्पण (सं०)
कुमारसेन ,,	वैद्यक शास्त्र (सं०), कर्मप्राभृत (सं०) विद्यानन्दिकी अष्ट-सहस्रीमें योगदान।
विद्यानन्द स्वामि (ल० ७७५-८२५ ई०)	तत्वर्थश्लोकवार्तिक, अष्टसहस्री, युक्त्यानुशासनालंकार, विद्यानन्द महोदय, आप्तपरीक्षा, प्रमाणपरीक्षा, पत्रपरीक्षा, तर्कपरीक्षा, सत्यशासनपरीक्षा, नयविवरणम्, प्रमाणमीमांसा, प्रमाणनिर्णय, श्रीपुरपार्श्वनाथस्तोत्र (सब सं०), अन्तिमके अतिरिक्त सब दार्शनिक, प्रथम तीन टीकायें हैं, शेष मौलिक हैं।
दशरथगुरु (ल० ७७५-८३५ ई०)	कायचिकित्सा (सं०)
उग्रादित्याचार्य ,,	कल्याणकारक (सं०, ५०००, वैद्यक) हिताहिताध्याय (सं०, मांसनिराकरण प्रकरण)।
शिवमार सगीत गंगनरेश (७७७-८०० ई०)	गजशास्त्र या हस्त्यायुर्वेद, गजाष्टक, शिवमारत—तीनों क०
स्वयंभूमहाकवि (ल० ७८०-७९६)	पउमचरिउ या रामायण (१२०००), रिट्ठनेमिचरिउ या हरिवंशपुराण, पंचमी चरियउ, (नागकुमारचरित), स्वयंभू-छन्द (सब—अप०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनसेनसूरि पुन्नाट—(७८३ ई०)	हरिवंशपुराण (सं०, १०००० शक ७०५)
जिनसेन स्वामि (ल० ७९०-८५०)	जयधवलटीका (प्रा० सं० शेष, ४०००० शक ७५९), लोकानुयोग (सं०), पार्श्वाभ्युदयकाव्य (सं०), आदिपुराण (सं०, १०३८०) अपूर्ण ।
श्रीधराचार्य (७९९ ई०)	ज्योतिर्ज्ञानविधि (सं०), गणितसार (सं०)
श्रीपाल (ल० ८०० ई०)	जयधवलका संपालन-सम्पादन
हेलाचार्य ,,	ज्वालिनीकल्प (प्रा०)
कोट्याचार्य ,,	वड्डाराढने (वृहत् आराधनाकथा (क०)
पेराशिरियर ,,	तोलकपियम व्याकरणकी टीका (त०)
मुण्डनेय्यार अरैयनार (ल० ८०० ई०)	पलमोलि (त०) सूक्तिसंग्रह
इन्द्रनन्दि ,,	संहिता (प्रा०), पूजाविधि (प्रा०)
आर्यदेव ,,	राद्धान्त (सं०)
कन्नमय्य ,,	मालतिमाधवकाव्य (क०)
पद्मसेन ,,	पार्श्वचरित्र (सं०)
त्रिभुवन स्वयंम् (ल० ८००-८२०)	स्वयंभूके काव्योंका सम्बर्द्धन-सम्पादन
अनन्तवीर्य (रविभद्रशिष्य) (ल० ८००-८४०)	सिद्धिविनिश्चयटीका (सं०), प्रमाणसंग्रह टीका (सं०)
अमोघवर्ष नृपतुंग (८१५-७६ ई०)	प्रश्नोत्तररत्नमालिका (सं०), कविराजमार्ग (क०)
गुणनन्दि (ल० ८२५-५० ई०)	जैनेन्द्रका शब्दार्णव सूत्रपाठ (सं०
चन्द्रकीर्ति ,,	श्रुतविन्दु (सं०)
अनन्तकीर्ति (ल० ८५० ई०)	बृहत्सर्वज्ञसिद्धि, (धर्मसिद्धि), जीवसिद्धि, प्रमाणनिर्णय, (सब सं०)
देवसेन (वीरसेन शिष्य) (ल० ८५० ई०)	धर्मसंग्रह (प्रा०)
विजया (वंकेय पत्नी ,,	काव्य (सं० (?)
महावीराचार्य (ल० ८५०-७५ ई०)	गणितसारसंग्रह, क्षेत्रगणित, ज्योतिषपटल, छतोसुपूर्वा प्रति-उत्तर प्रतिसह, (सब सं०) ।
शाकटायन पाल्यकीर्ति ,,	शब्दानुशासन, स्वपज्ञ, अमोघवृत्तिसहित, स्त्रीमुक्तिप्रकरण—(सब सं०)
गुणभद्राचार्य (ल० ८५०-८५ ई०)	जिनसेनीय आदिपुराणका शेष भाग, उत्तर पुराण, जिनदत्त-चरित, आत्मानुशासन, (सब सं०)
वीरपण्डित (वीराचार्य) ,,	प्रतिष्ठापाठ (सं०), शकुनदीपक (सं०)
असगकवि (८५३ ई०)	वर्द्धमान या सन्मतिचरित (सं०, वि० सं० ९१०), शान्ति-पुराण (सं०), चन्द्रप्रभपुराण (सं०) आदि, कई कन्नड़ग्रन्थ भी बताये जाते हैं ।
कौमारसेन (८७१ ई०)	अर्हतप्रतिष्ठासार (सं०)
सिंहसूरि मुनि (ल० ८७५ ई०)	वट्टाराधनकथाकोश (प्रा०, ४०००)
गुणवर्म (८८६-९१३ ई०)	हरिवंश या नेमिनाथपुराण (क०), शूद्रकपद्य (क०)
लोकसेन (८९८ ई०)	गुणभद्रीय महापुराणका सम्पादन-विमोचन (पूरक ८२०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भरत सेन (ल० ९०० ई०)	काव्य ग्रन्थ सं०) (?)
पद्मनन्दिमुनि ,,	धम्मरसायणम् (प्रा०, १९३) चरणसार (प्रा०)
दिनकरसेन ,,	कन्दर्पचरित्र (सं०)
गोविन्दकवि ,,	कथारत्नसमुद्र (क० ?)
सेढुकवि ,,	पउमचरिउ (अप०)
कुन्दकुन्दमणि ,,	सुलोयणाचरिउ (प्रा०), वैद्यगाहा (प्रा०, ४०००)
वप्पनन्दि ,,	वृषभनाथपुराण (सं०)
जयराम ,,	धर्मपरीक्षा (प्रा०)
अमितगति वीतराग (ल० ९०० ई०)	योगसार प्राभृत (सं०)
अज्ञात ,,	अकलंक चरित (सं०)
हरिचन्द्रकवि ,,	धर्मशर्माभ्युदय (सं०), जीवन्धरचम्पू (सं०)
अमृतचन्द्राचार्य (ल० ९०५-९४० ई०)	समयसारकी आत्मख्याति टीका तथा कलश, प्रवचनसार की तत्त्वदीपिका टीका, पंचास्तिकाय टीका, तत्त्वार्थसार, पुरुषार्थ-सिद्ध्युपाय, (सब सं०) ढाढसीगाथा (प्रा०), श्रावकाचार (प्रा०)
अभयनन्दि (९०५-९४० ई०)	जैनेन्द्रकी महावृत्ति-मूल सूत्रपाठ पर (सं०, १२०००)
हरिषेण (९३२ ई०)	बृहत्कथाकोश (सं०, १५७ कथाएँ) वि० सं० ९८९
इन्द्रनन्दि योगीन्द्र (९३९ ई०)	ज्वालामालिनीकल्प (सं०, शक ८६१), वज्रपंजराधना (सं०), श्रुतावतारकथा (सं०)
पंप (आदिपंप) (९४१ ई०)	आदिपुराण चम्पू (क०, शक ८६३) विक्रमार्जुनविजय या पंपभारत (क०)
श्रीचन्द्रमुनि (९४१-८६६ ई०)	विक्रमार्जुनविजय या पंपभारत (क०)
श्रीचन्द्रमुनि (९४१-८६ ई०	प्राकृत कथाकौमुदी (प्रा०)
सोमदेवसूरि (९४५-९७५ ई०)	यशस्तिलकचम्पू (सं०, शक ८८८२), उपासकाध्ययन (सं०), पार्श्वनाथचरित्र, अध्यात्मतरंगिणी या योगप्रदीप, योगमार्ग, ध्यानपद्धति, (४०) स्याद्वादोपनिषद्, युक्तिचिन्तामणि, न्याय-विनिश्चयटीका, षण्णवतिप्रकरण, नीतिवाक्यामृत, त्रिवर्ग-महेन्द्र-मातलि संजल्प, सुभाषितसंग्रह, (सब सं०)।
देवेन्द्र (ल० ९५० ई०)	योगीन्द्रगाथा (प्रा०, २०५)
माइल्ल धवल ,,	द्रव्यस्वभावप्रकाश नयचक्र (प्रा०, ४२३)
शुभचक्र ,,	षड्दर्शन प्रमाण-प्रमेयानुप्रवेश (सं०)
जयनन्दि ,,	मूलाराधना टिप्पण (सं०)
वसुनन्दियोगी (ल० ९५० ई०)	तत्त्वविचार (प्रा०, ९५)
वीरनन्दि आचार्य ,,	चन्द्रप्रभाचरित्र काव्य (सं०)
कनकनन्दि ,,	सत्वस्थान (विस्तर सत्वत्रिभंगी या विशेष सत्ता त्रिभंगी (प्रा०, ४१), कर्मप्रकृति (प्रा०, ३७), पंचपरुवणा (प्रा०, ३७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृषभनन्दि (ल० ९५०-७५ ई०)		कर्मप्रकृति (प्रा०), कर्मस्तवन (सं०), कर्मस्वरूप वर्णन (क०)
गुणभद्र	,,	गुणभद्रसंहिता (सं०)
सिद्धसेन	,,	नीतिसारपुराण (सं०, १५६३०)
सिंहनन्दि	,,	अनुप्रेक्षा कथा (अप०) आत्मसम्बोधन (प्रा०)
वीरभद्र (६५२ ई०)		आराधना पताका (प्र० ९९०, वि० सं० १००८)
नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती (९५५-८५ ई०)		गोम्मटसार जीवकाण्ड (७३३), कर्मकाण्ड (९७२), लब्धिसार, त्रिलोकसार, कर्मप्रकृति, आस्रवत्रिभंगी, उदम्यत्रिभंगी, भाव-त्रिभंगी, प्रकृतिसमुत्कीर्तन, पंचसंसार, (सब–प्रा०)
चामुण्डराय वीरमार्तण्ड	,,	गोम्मटसारकी वीरमार्तण्डी टीका (क०), त्रिषष्टिलक्षण महापुराण या चामुण्डरायपुराण (क०), चारित्रसार (सं०), भावनासारसंग्रह (सं०)
पुष्पदन्त महाकवि (९५९-७४ ई०)		तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारु-महापुराण (अप०, २००००), णायकुमारचरिउ (अप०), जसहरचरिउ (अप०), कथामकरंद (अप०), कोशग्रन्थ (?), शिवमहिम्नस्तोत्र (सं०)
पोन्न (९६०-९० ई०)		शान्तिनाथपुराण (क०), जिनाक्षरमाले (क०)
रन्न (९६०-९५ ई०)		अजितनाथपुराण या पुराणतिलक (क०), साहसभीमविजय या गदायुद्ध (क०)
चाणिक्यनन्दि महापंडित (९६५-१००० ई०)		परीक्षामुखसूत्रम् (सं०)
जयदेव (९६८ ई०)		नागकुमारकथा, छन्दशास्त्र, चन्द्रलोकालंकार (१६२४), सब सं० ।
धनपाल धक्कड़ (ल० ९७० ई०)		भविसयत्तकहा (अप०)
वीरनन्दि (ल० ९७५ ई०)		सुकुमालचरित्र (प्रा०)
मतिसागर	,,	विद्यानुवाद मन्त्रशास्त्र (सं०)
भूपालकवि गोल्लाचार्य (ल० ९७५ ई०)		भूपालचतुर्विंशतिस्तोत्र (सं०)
सिद्धसेन मुनि	,,	चौबीस (तीर्थंकर) ठाणा (प्रा०)
भावसेन त्रैविद्य	,,	शाकटायन शब्दानुशासनकी टीका, कातन्त्ररूपमाला या कातन्त्र, लघुवृत्ति (३०००), विश्वतत्त्व प्रकाश, प्रमाप्रमेय—सब सं०
माधवचन्द्र त्रैविध (ल० ९७५-१००० ई०)		त्रिलोकसारकी टीका (सं०), क्षपणासार (सं०)
नागवर्म	,,	कर्णाटक कादम्बरी, नागवर्मनिघण्टु या अभिधानरत्नमाला, भाषाभूषण, छन्दाम्बुधि (शक ९१२), (सब क०)
कणिभेदय्यार	,,	एलाति (त०,नीतिकाव्य), तिणैमालेनूरैम्बुतु (त०,शृंगारकाव्य)
अमृतसागर	,,	याप्परुंगलकारिकै-वृत्तिसहित छन्दशास्त्र (त०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org